IJCRT.ORG ISSN : 2320-2882

INTERNATIONAL JOURNAL OF CREATIVE RESEARCH THOUGHTS (IJCRT)

An International Open Access, Peer-reviewed, Refereed Journal

""अमूर्त कला का वैश्विक विकास एवं भारतीय योगदान"

डॉ महिमा मरमट

विषय विशेषज्ञ

(विक्रम विश्वविद्यालय उज्जैन, म. प्र.)

Orchid id - https://orcid.org/0009-0000-5061-8616

सारांश (Abstract):

यह शोधपत्र अमूर्त कला के वैश्विक विकास और भारतीय योगदान का विश्लेषण करता है। मानव अभिव्यक्ति के प्रारंभिक माध्यम के रूप में चित्रकला का उद्भव हुआ, जिसकी झलक भारतीय गुफा चित्रों, लोक और जनजातीय परंपराओं में मिलती है। बीसवीं सदी में पश्चिम में विकसित अमूर्त कला ने पारंपरिक आकृतियों से हटकर रंग, रेखा और रूप के माध्यम से विचार और भावों को अभिव्यक्त करना शुरू किया। भारत में आधुनिकता के साथ-साथ कुछ कलाकारों ने अमूर्त शैली को अपनाया और उसमें भारतीय अध्यात्म व सांस्कृतिक बोध को समाहित किया। बावजूद इसके, जनमानस में अमूर्त कला को लेकर अबूझपन की धारणा बनी हुई है, जिसका कारण कला-दृष्टि की कमी और कला को पढ़ने की प्रवृत्ति है। यह शोध इस दृष्टिकोण को बदलने की आवश्यकता पर बल देता है और भारतीय अमूर्त कला की वैश्विक उपस्थिति को रेखांकित करता है।

मुख्य शब्द:अमूर्त कला , भारतीय समकालीन कला , समकालीन कला , यूरोपीय कला, कला

भूमिका (Introduction):

कला मानव सभ्यता की आत्मा रही है, जिसने विचारों, भावनाओं और अनुभवों को अभिव्यक्त करने के लिए अनेक रूपों को जन्म दिया। चित्रकला की परंपरा जितनी पुरानी है, उतनी ही विविध भी है — विशेषकर भारत में, जहाँ गुफा चित्रों से लेकर लोक, पारंपरिक और जनजातीय कलाओं तक, एक समृद्ध दृश्य परंपरा का विकास हुआ है। इसी क्रम में बीसवीं शताब्दी में एक नई कला शैली का उदय हुआ, जिसे हम अमूर्त कला या वस्तुनिरपेक्ष कला के नाम से जानते हैं। यह कला रूप दृश्य यथार्थ से हटकर रंग, रेखा और रूप के माध्यम से एक आंतरिक, भावनात्मक अथवा वैचारिक संसार को प्रस्तुत करता है। जहाँ पश्चिम में इस

शैली ने अपनी अलग पहचान बनाई, वहीं भारत में भी कई कलाकारों ने इसे अपनाकर इसे भारतीय सांस्कृतिक धरातल पर एक नई पहचान दी। किंतु आज भी भारतीय समाज में अमूर्त कला को लेकर एक अस्पष्टता और दूरी का भाव देखा जाता है। प्रस्तुत शोधपत्र का उद्देश्य अमूर्त कला की वैश्विक विकास यात्रा के साथ-साथ भारत में इसके स्वरूप, प्रयोग और योगदान का विश्लेषण करना है, ताकि इस शैली को लेकर समाज में एक सम्यक दृष्टिकोण विकसित किया जा सके।

- **पाश्चात्य अमूर्त कला**

जिस कला में प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से भौतिक वस्तु के रूप का कोई संकेत नहीं होता ऐसी कला को एब्स्ट्रेक्ट या नॉनफिगरेटिय कला कहते हैं।' एब्स्ट्रेक्ट शब्द का मूल अर्थ 'सारतत्व निकालना' होने के कारण कुछ विद्वान एब्स्ट्रेक्ट शब्द के प्रयोग के विरूद्ध है क्योंकि उनके अनुसार यह शब्द अप्रत्यक्ष रूप से वास्तविकता की रूपजन्य अनुभुति की ओर ही निर्देश करता है, अतः उनके विचार से 'नोन फिगरेटिव शब्द का प्रयोग अधिक सही है। वस्तुनिरपेक्ष कला के आरम्भिक काल में वस्तु-सृष्टि के बाह्य रूप से प्रेरणा लेकर लेकिन सामने जो दिख रहा है उसके बाह्य रूप को हटाकर कलाकृतियों बनायी गयी और उसको एब्स्ट्रेक्ट' कला नाम से सम्बोधित किया गया, बाद में जब मोंद्रियान ने पूर्ण रूप से काल्पनिक ज्यामितीय आकारों में तत्सदृश्य कलाकृतियों बनायी तब ऐसी कृतियों के सन्दर्भ में भी रूद 'एब्स्ट्रेक्ट' शब्द का प्रयोग किया गया। यद्यपी मोंदियान की कृतियों को 'नोन फिगरेटिव' कहना अधिक उचित है। इस पुस्तक में दोनो के लिए 'वस्तुनिरपेक्ष' शब्द का प्रयोग किया है। यद्यपि कुछ लेखन 'अप्रतिरूपवादी' या 'अमूर्त' शब्द का भी प्रयोग करते है।

कला की आधुनिकतम धारा वस्तु निरपेक्ष कला के रूप में प्रकट हुई। इनमे ऐन्द्रिक रूपों का पूर्ण बहिष्कार है। इसके प्रवर्तकों 'कांदिंस्की' मालेविच, गोन्द्रिया ने सम्पूर्ण यथार्थ के हेतु प्रतीकों का विकास किया। मोंन्द्रिया के विचार ने परिवर्तनशील बाहरी यथार्थ के पीछे छिपे नियमों को समझकर सार्वभौमिक संगति को प्रस्तुत करना ही अमूर्त कला का लक्ष्य माना है। इसके हेतु वह सरल रेखाओं, समकोणो, तीन प्राथमिक रंगो तथा तीव्र अरंगो का प्रयोग करता है। इस प्रकार वह सूक्ष्म सूत्रो के द्वारा ही यथार्थ को प्रस्तुत करता है। सूक्ष्म कलाकारों की अपेक्षा कांर्दिस्की की कला में अधिक आकर्षण व रंगो का नृत्य मिलता है।"

सर्वप्रथम प्लेटो ने वस्तुनिरपेक्ष सौन्दर्य का विचार करके लिखा कि वृत्त आयात ऐसे आकार है जो किसी बाहा कारण से वा उपयुक्तता की वजह से सुन्दर नहीं है बल्कि सौन्दर्य उनकी प्रकृत्ति है एवं उनसे ऐसी सौन्दर्यानुभूति होती है जो निरिच्छ निर्विकार है, इस प्रकार रंगो के विशुद्ध प्रयोग में भी यह सौन्दर्य है।""

अक्सर आधुनिक कला, अमूर्त कला और धनवादी कला मे घालमेल हो जाता है। बीसवीं शताब्दी में आधुनिक कला के तीन बडे नाम पिकासो, पाउल क्ली और गीरो अमूर्तन में गहरी दिलचरपी के बावजूद अमूर्त कलाकार नहीं कहे जा सकते है। पिकासो ने अपने अनेक अमूर्त चित्रों में जानबुझ कर ऐसे कुछ तूलिकाघात जोड़ दिए है जो किसी चेहरे या आकृति का भ्रम पैदा करते है।

आधुनिक कला के इतिहास में 1910 का विशेष महत्व है। यह माना जाता है कि इस साल अमूर्त कला का जन्म हुआ। यह अलग बात है कि अमूर्त कला तब से है जब से मनुष्य ने गुफाओं में चित्र बनाना शुरू किए। 1952 में एक चर्चित कला प्रदर्शनी का चौकाने वाला नाम था "आधुनिक कला के चालीस हजार साल।"

अमूर्त कला भले ही कोई कला आन्दोलन न हो पर 1910 के आस-पास चार पांच महत्वपूर्ण कलाकारों ने अमूर्त कला का एक अलग खाना-सा बना दिया। खासतौर पर कंदिस्की (1866-1944) और गोंदियान (1872-1944) के नाम के साथ आधुनिक अमूर्त कला का विकास जुड़ा हुआ है। सोवियत संघ और हालैंड में जन्में इन दो कलाकारो ने अमूर्त कला को लगभग एक कला आन्दोलन में बदल दिया। उस समय घनवादी चित्रकार लोगा के देखने के नजरिए में क्रान्तिकारी परिवर्तन कर रहे थे। पर कादिस्की और मोंद्रियान दोनो ही घनवादियों से थोडा उम्र में भी बड़े थे। दोनो संतो सरीखी समाधि लगाकर कला को संगीत और गहरे आध्यात्मिक अनुभव में बदल रहे थे।

आधुनिक कलाकारों द्वारा किये गये संगीत के अध्ययन से एवं कला की संगीत के साथ की गयी तुलना से कला वस्तुनिरपेक्षता की ओर अधिक तेजी से गतिमान हुई। शोपेनहौर ने लिखा है "समी कलाएँ संगीत की और प्रवर्तित है" इस विचार ने आधुनिक कलाकारो को संगीत सदृश अमूर्तता की दिशा में प्रयोग करने को प्रोत्साहित किया।'

आधुनिक अमूर्त कलाकारो ने भारतीय तंत्रविद्या से भी बहुत कुछ सीखा। गौर करने की बात यह भी है कि घनवाद और अभिव्यंजनावाद इन दोनो कला आंदोलनों के संदर्भ में अमूर्तन का विशेष महत्व रहा। फाववाद और मातीस को भी अमूर्तन के संर्दभमें देखा और समझा जा सकता है। इंग्लैण्ड में टर्नर सरीखे कलाकार ने 1841 के करीब कुछ ऐसे चित्र बनाए थे जिनमें अमूर्तन के प्रति अमूर्त सौन्दर्य के क्षण पहचाने जा सकते है। दरअसल प्रभाववादियों से शुरू होकर घनवादियो तक ने आधुनिक अमूर्तन के लिए रास्ता बनाया। वॉनगोंग, रेनुआ और क्लोदमोने के खेतो में अमूर्त रूपाकार प्रबल होते दिखते है।

किन्तु यह सब अचानक नही हुआ। बोदेलेर व बाल्जाक के लेखों में समकालीन कला की भविष्य में अमूर्तन में परिणति होने की घनिष्ठ संभावना को सूचित किया था। प्रभाववादी, उत्तरप्रभाववादी एवं फाववादी की कृतियों में अमूर्तता की और अविचारित प्रगति थी। प्रमाववादियों ने चित्र के पूरे प्रभाव को अपना लक्ष्य बना कर वस्तु के वैयक्तिक महत्व को घटा दिया एवं अपनी मुक्त अंकनशैली से रंगो के सौन्दर्य व सतह की बनावट की और कलाकारों व कलाप्रेमियों का ध्यान आकर्षित किया फाव व अभिव्यजनावादी चित्रकारों ने इसके आगे बढ़ कर चित्र में रंगो के स्वाभाविक सौन्दर्य का विकास करने के उद्देश्य से वस्तु के नैसर्गिक वर्ण की पूर्ण उपेक्षा करके रंगो का विस्तृत क्षेत्रों में व केवल रससंगति व प्रतिकात्मकता का विचार करके प्रयोग किया तथा रेखा के अभिव्यक्ति के स्वाभाविक सामर्थ्य को कार्यान्वित करने के उद्देश्य से सरलीकृत एवं ऐंठनदर रेखांकन शुरू किया। घनवादी व भविष्यवादी कलाकारों नेज्यामितीय आकारों का प्रयोग शुरू किया और ये वस्तुनिरपेक्षता के निकट पहुँचे किन्तु उनको वस्तुनिरपेक्षता के क्षेत्र में रिक्तता का भय था वे अपनी कला को पूर्ण वस्तुनिरपेक्ष नहीं बना पाये इसके अतिरिक्त वास्तविकता में ही उनको कुछ ऐसा

गावनात्मक सौन्दर्य दिखाई दे रहा था जिसको उन्होने सृजनात्मक अनुभूति के लिये पर्याप्त माना और उसको रचनात्मक रूप दिया। इस प्रकार मिन्न अवस्थाओं को पार करते हुए रंग, रेखा व आकारों ने वस्तुनिरपेक्ष कला के अर्न्तगत वस्तुसादृश्य के बाह्य लक्ष्य से मुक्त होकर, अपने सौन्दर्यामिव्यक्ति के स्वाभाविक सामर्थ्य को प्राप्त किया।'

वस्तु-निरपेक्ष कला या नाम फिगरेटिव आर्ट का उदय हमे समस्त प्राचीन कला के अन्तिम सिरे पर ला खड़ा करता है और इसलिए उसे कला इतिहास में एक स्तम्भकहा जाता है।बहुत से कलाकार ऐसे भी हे जिन्होंने अमूर्त कला के विकास में योगदान दिया पर वे आकृतिमूलक दुनिया में आते-जाते रहे। पाउल क्ली की कला के जादू का यहां खासतौर से उल्लेख किया जाना चाहिए वे अपनी कला में परी कथा सरीखा माहौल भी बनाते थे और उनकी दुनिया में काव्यात्मक आश्चर्य भी भरे पड़े थे फिर भी बाहरी प्रकृति से वे संबंध बनाए रखे थे।

पाउल क्ली कभी आकृतिमूलक आधार से शुरू होकर अमूर्त की और चले जाते और कभी अमूर्तन से शुरू होकर आकृतिमूलक रास्ते को अपना लेते थे। उनकी कला में यह आवाजाही दिलचस्प है। रंगो के आयताकार रूप उनकी कला में अलग ही नजर आते थे।

लेकिन अमूर्त कला का क ख ग कांदिंस्की, मोंदियान, देलोन और मालेविच के प्रयत्नों में ही खोजा जाना चाहिए। 1910 से 1917 के बीच के वर्षों में पेरिस, म्यूनिख, मास्को, फ्लोरेस, ज्यूरिख और एम्स्टरडम में अमूर्त कला के केन्द्र विकसीत हुए इन केन्द्रो ने यह साबित करने की कोशिश की कि अमूर्त कला एक सार्विक सच्चाई हैउसकी एक सार्विक भाषा है। उसका कोई निश्चित संप्रदाय नही है और न ही उसे आन्दोलन के रूप में ही सीमित कर देना चाहिए।

कादिरंकी का अमूर्त कला संबंधी चिंतन बहुत महत्वपूर्ण है, बल्कि कुछ आलोचक तो यह भी कहते है कि कादिरंकी ने अनुयाई अधिक महत्वपूर्ण पैदा किए। कांदिस्की ने अपने करियार की शुरूआत एक वैज्ञानिक के रूप में की। देर से ही पर 'आंतरिक जरूरतों ने उन्हे कला का रास्ता पकड़ने के लिए मजबूर किया।

कादिंस्की ने प्रभाववाद, फाववाद, अभिव्यंजनावाद के रास्ते होते हुए 1910 मे अपने पहले अमूर्त जल रंग चित्र की रचना की और द आर्ट ऑफ स्पिरिचुअल हार्मोनी' का प्रकाशन किया। कांर्दिस्की एक बहुत अच्छे सिद्धांतकार थे और किसी कला समीक्षक से अच्छा लिखने की क्षमता रखते थे।'

प्रभाववाद, फाववाद के बाद घनवाद शैली का प्रभाव विस्तृत और गहन था। 1911-12 से विभिन्न देशो के चित्रकार अमूर्त ज्यामितीय आकारों पर आधारित चित्रण करने लगे। धनवाद ने उनका मार्गदर्शन किया। वर्ग, वृत्त, त्रिभुज, कोण, सीधी रेखा चित्र संयोजन के अभिन्न अंग गाने जाने लगे। कुछ कलाकारों की तो धारणा बन गई कि केवल ज्यामितीय आकार ही चित्रण के लिये पर्याप्त है। घनवाद के प्रादुर्भाव के फलस्वरूप चित्रकारों के अनेको अल्पकालीन लघु अभियान छिड़ गये। इनमें से न्यूनाधिक सभी अमूर्त चित्रण पर आधारित थे और कुछ तो इतनी कम अवधि के थे कि उनके विषय का ठीक-ठीक अनुमान लगाना भी

कठिन हो जाता है। केवल चंद चित्रों से ही उसके स्वरूप का अनुमान लगाना पड़ता है। प्रायः चित्रकारों ने धनवाद और अभिव्यंजनावादी शैली का समन्वय करने की चेष्टा की है। अमूर्त चित्रण के अभियानों का गढ़ रूस व हालैण्ड रहा है। इस प्रसंग में यह अच्छी तरह समझ लेना चाहिए कि अमूर्त कला के अंतर्गत चित्रकार वस्तुओं के मूर्तमान आकारों को अंकित नही करता बल्कि रेखा, रंग, टेक्सचर आदि के स्वतंत्र प्रयोग से संयोजन करता है चित्रकार आकारों और रंगो के समन्वय से प्रभावपूर्ण सामंजस्य उत्पन्न करने में अपना ध्यानकेन्द्रित रखता है। प्राकृति अनुकरण से उनका कोई प्रयोजन नहीं होता। घनवादी और अभिव्यंजनावादी कलाकारों ने अंतर्निहित सत्यान्चेषण के उद्देश्य से मूर्त से अमूर्त चित्रण की ओर जो पक्ष उठाया था वही आगे चलकर Non-objective के रूप में विकसित हुआ।

- **"अमूर्त कला" आर्टिस्टों की निगाहो में**

गोगों ने लिखा है "कला अमूर्तन है" और "मैं सही मायनों में आदिम हूँ।" मोने के लिए कला का स्वरूप 'प्रकाश' था। उसी के शब्दों में "मेरे चित्रों में सर्वाधिक महत्वपूर्ण 'व्यक्ति' प्रकाश है।" कोर्वे और मिले कला के यथार्थवादी स्वरूप के हिमायत्ती थे। कोर्वे के इस दृष्टिकोण का प्रमाण उनके इस वाक्य में मिलता है "मुझे देवदूत दिखलाओं तो मैं उसका चित्र बनाऊ।" मिले धरती का लाल था और धरती में ही रहना चाहता था। उसकी उक्ति थी "मैं धरती की आवाज सुनता हूँ। इसलिए धरती की चीजों की ही तस्वीर बनाना चाहता हूँ।" इस यर्थाथवादी दृष्टिकोण के विपरीत सिजों का कहना था 'मैं प्राकृति की अनुकृति नही करना चाहता। मैं उसे फिर से ढालना चाहता हूँ, मैं प्राकृति के सम्मुख ही प्राकृति को फिर से ढालना चाहता हूँ। मैं नयी कला का आदिम हूँ। कला प्राकृति के समानान्तर सामन्जस्य है। मेरे लिए रूप रंग एक ही है। मेरे लिये रंग रूप है।" एक चित्र सबसे पहले रंग के अतिरिक्त अन्य कुछ प्रस्तुत नहीं करता। आधुनिक कला ने आधुनिकता की ओर मोड़ इसी महान कलाकार के निर्देशन में लिया था। सिजों कला को प्राकृति से अलग नही करते, किन्तु उसे उसका प्रतिविम्ब भी नही होने देते।

मातीस ने भी बाहा प्रतीत से आआंतरिक सत्य को अलग करने पर जोर दिया और कहा- "केवल यह तथ्य महत्वपूर्ण है।" मातीस ने कुछ ऐसा भी कहा है- "कला का कार्य तत्क्षणिक नहीं होता वह मेरे दिमाग की उत्पत्ति है, प्रभाववादी चित्रकार दीगा ने भी कला के इसी मानसिक पक्ष की पुष्टि की है- प्रकृति के सम्मुख समर्पण करने से भी कला और ऊँची होती है। कलाकृतियों का निर्माण मानसिक तलसे होता है। अल्बर्ट ओखिर भी इसी मत के है- "कला अब सतह के ऊपरी आवरण की छाया नही रही वह संसार के उच्चतम गुणों का प्रत्यक्षीकरण है।

20वीं सदी में ब्रकुसी शिल्पकार जिन्होने परम्परा से अलग हटकर अमूर्त सृजन की और कदम बढ़ाया। उन्होने अपने आलोचकों को इन शब्दों में फटकारा "जो लोग मेरी कृतियों को अमूर्त कहते है वे बेवकूफ है। उन्हें यह पता नहीं कि जिसे वे अपूर्ण कहते हैं मूर्तमान से अधिक यथार्थ है क्योंकि जो कुछ ऊपर सतह पर दिखता है। वह सत्य नहीं है बल्कि उसमें अन्तर्तिहित विचार और तत्व ही सत्य होता है।" इन अर्थों में आधुनिक कला का दर्शन बिल्कुल भारतीय दृष्टिकोण से आ मिला है।

कांर्दिस्की और मॉडियन दोनों ही निरपेक्षकला (नान-अब्जेक्टिव) के प्रबल प्रक्षधर थे। कांर्दिस्की में लिखा है रंगो और रूपाकारों के सामन्जस्य को मानव की आत्मा के साथ सम्बद्ध किया जा सकता है।"

कांर्दिस्की ने साफ-साफ कहा है "आधुनिक कला तभी पैदा होती है जब चिन्ह प्रतीक बन जाते है।" और वानगाग का कथन सम्भवतः इसी आध्यात्मिक दृष्टिकोण का चर्मोत्कर्ष है। "सबसे बड़े कलाकार क्राइस्ट थे।"अमूर्त कला के इस दार्शनिक पक्ष के साथ ही उसके ऐतिहासिक पक्ष का सिहावलोकन भी आवश्यक है।

अमूर्त कला की शुरुआत फ्रांस की राजधानी, पेरिस से हुई है। 'वादों की श्रृंखला की भी वहीं से शुरूआत होती है। वहाँ उन्नीसवीं शती का आरम्भ फ्रांसीसी क्रान्ति के सुलगते हुए अंगारो पर होता है। सदियों से सामन्तशासी के विरूद्ध चलने वाला संघर्ष सफल हो जाता है। नेपोलियन बोनापार्ट सत्तारूढ़ होता है। सारे युरोप को हिला देता है। उसका शाही चित्रकार डेविड शास्त्रीय शैली से चित्र निरूपण करता है धीरे-धीरे राजतन्त्र समाप्त होता है। गणतन्त्र की शुरूआत हुई साथ ही कलाकारो

भारतीय अमूर्त कला

हमारे देश में जहा लोक, पारंपरिक और जनजातीय कला की समृद्ध परम्परा रही है अगर इतिहास में झांके तो हमारे यहां गुफा चित्रण परम्परा भी दिखती है। माना जाता है कि मानव जाति ने अपनी अभिव्यक्ति के लिए सबसे पहले चित्रांकन को ही चुना, यहा तक की शुरुआती लेखन में भी जिस लिपि को अपनाया गया वह चित्रभाषा ही थी। आज की प्रचलित विभिन्न लिपियों का विकास उसके बहुत बाद की बात है। भारतीय इतिहास के हर दौर में कला संस्कृति भारतीय समाज का महत्वपूर्ण तत्व रहा है। इसके बावजूद जब वात आधुनिक या समकालीन कला की आती है तो हमारे यहां आसानी से यह मान लिया जाता है कि यह तो समझ से बाहर की चीज है। किसी कला प्रदर्शनी में अगर चित्र आकृतिमूलक हुए तब तो फिर भी उसे कुछ दर्शक मिल जाते है, लेकिन अमूर्त या गैर आकृतिमूलक कृतियां सामने हो तो उसे अबूझ मान लेना ही लोग पसंद करते हैं। वैसे देखा जाए तो इसका एक प्रमुख कारण तो यह है कि हममे से अधिकतर कला को देखने की बजाए पढ़ना पसंद करते है। जबकि सच तो यह है कि कलाकृतियों का अवलोकन एक विशुद्ध चाक्षुष प्रक्रिया है उसे किसी लिखावट की तरह पढ़ने की बजाए देखने विश्लेषण करने और तदुपरांत उसके भावो को आत्मसात करने की जरूरत होती है। सीधे शब्दों में कहा जाए तो कला को समझने के लिए प्रेक्षक के अंदर एक सम्यक कला दृष्टि का होना आवश्यक होता है।

अब बात अगर हम अमूर्तकला की करे तो इतना तो स्पष्ट है कि जिसे अमूर्त व अन्सट्रेक्ट कला कहते है वह बीसवी सदी की देन है, जिसे प्रारम्भ में भले ही कला के प्रचलित रूपों परम्पराओं व धारणाओं से इतर माना गया। यहां तक कि तत्कालीन यथास्थितिवादियों ने उसे गंभीरता से लेना भी उचित नहीं समझा। किन्तु बाद के वर्षों में यह समकालीन कला में एक महत्वपूर्ण धारा के रूप में सर्व स्वीकार्य हो गया। आज किसी भी समकालीन कला प्रदर्शनी में हम यह कल्पना भी नही कर सकते कि उसमें अमूर्त कलाकृतियों की भागीदारी न हो। वैसे अब्सट्रेक्ट का हिन्दी में शाब्दिक अर्थ होता है सार या निचोड़ इस तरह से देखें तो अमूर्तन या अब्सट्रेक्शन वह कला है जो हमारे कथ्य का सार तत्व हमारे सामने रखता है देखा जाए

तो आकृतिमूलक चित्र यहां दर्शक या प्रेक्षक को अपनी आकृति और संयोजन की सीमाओं में बांधने की कोशिश में लगा रहता है यही अमूर्तन उसे इन बंधनों से आजाद कर देता है। आकृति मूलक कृतियों का अवलोकन करते समय दर्शक ना चाहते हुए भी कलाकार की दृष्टि या विजन तक ही अपने को सीमित रखने को एक तरह से बाध्य हो जाता है। वह उतना ही देख सकता है जितना कलाकार उसे दिखाना चाहता है यहां कलाकार की कल्पनाशीलता और अंकन की सीमा ही चाहे अनचाहे दर्शक की सीमा बन जाती है। जबकि अमूर्तन शैली की कृतिया दर्शक को यह पूरी स्वतंत्रता देती प्रतीत होती है।'

भारतीय चित्रकला में अमूर्त का उदय इस उद्देश्य से हुआ कि कला की पारंपरिक शैली व सौन्दर्य के स्थान पर चित्रों को उनके आंतरिक सौन्दर्य के द्वारा पहचाना जाए। चित्रों के विषय नैसर्गिक हुआ करते थे। जो कला पर छा जाते थे और देखने वाला उन्हें पढ़ता था और यह तथ्य उसके और कलाकृति के असली प्रभाव के बीच आ जाता था।

किसी न किसी हद तक अमूर्त मूल्य सभी कलाकारो की कृतियों में बदलाव के समय देखा जा सकता है, किन्तु उनमे से कुछ ने अमूर्त कला की प्रवृत्ति को काफी आगे बढ़ाया। 1950 के प्रारम्भ में हुसैन की कृतियों ने पुराने बिम्बों को तोडने और कला को एक नई भाषा देने का कार्य किया। अब ये कृतियाँ बिल्कुल विशुद्ध गैर अलंकारिक तो नही है किन्तु फिर भी प्राकृतिक विम्ब अब लोगों के दिलचस्पी का केन्द्र नहीं रहे। अब Motilts टूटे हुए विकृत या विशिष्ट शैली के है और वे सब मिलकर कृत्ति को सम्पूर्णता प्रदान करते है रंगो के टुकडे मन चाहे तरीके से फैला दिये जाते है। जिससे एक अनगढ़ टेक्सवर पैदा होता है। रेखाएं व रंग किसी विशेष आकृति को प्रदर्शित नहीं करते है। पर एक स्वतन्त्र आकृति बनाते है। इस विन्दु से आगे यही प्रक्रिया जारी रहती है। जिसमें विषय खंडित होता है और उसका सम्पूर्ण रूप एक नए कलात्मक रूप में उगस्ता है और यही कलाकार की कृति बन जाती है। 1950 को दशक में यही कृति बेडे, गायतोंडे, रामकुमार आदि की कलाकृति में दिखाई पड़ती है।

भारत में अमूर्तन की बात करें तो माना जाता है कि पश्चिम की तरह यह किसी तार्किक प्रक्रीया की परिणति ना होकर पचास और साठ के दशक में कुछ कलाकारों द्वारा रंग, रेखाओं टेक्सचर को प्रमुखता देने का परिणाम है वैसे तो भारतीय समाकालीन कला में अमूर्तन शैली को अपनाने वाले कलाकारों की सूची में पहला नाम वी.एस. गायतोंडे का रखा जाता है। बाद के दिनो में उनके ही समकालीन रामकुमार, सैय्यद हैदर रजा, अकबर पद्मसी, बीरेन डे, गणेश हलोई, हिम्मतशाह व जहांगीर सबावाला जैसे अनेक महत्वपूर्ण चित्रकारों ने अमूर्तन की इस परंपरा को सफलता पूर्वक अपनाते हुए इसे नई दिशा दी। हालांकि इनमें से कुछ कलाकार अपने शुरुआती वर्षों में लैंडस्केप पेंटर के तौर पर जाने जाते रहे थे, किन्तु बाद में इनके दृश्य चिंत्रो की दिशा अमूर्तन की और मुड़ती चली गई।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. Axcher w.g. India and Modern art London 1959
2. सखलकर र.वि. आधुनिक चित्रकला का इतिहास प्राकशन रा.हि. ग्रन्थ अकादमी. जयपुर
3. मूर्त एवं अमूर्त कला, ललित कला अकादमी नई दिल्ली
4. Armoson H.H. "history of modern art London 1969
5. भारद्वाज विनोद, बृहद आधुनिक कला कोश, प्रकाशन वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली
6. बाजपेयी राजेन्द्र, मार्डन आर्ट
7. अमूर्त के मार्ग, ललित कला अकादमी
8. बाजपेयी राजेन्द्र, आधुनिक कला
9. चतुर्वेदी डॉ. ममता, समकालीन भारतीय कला, रा.हि.ग्र. अकादमी
10. जोशी शेखर चन्द्र, आधुनिक चित्रकला का इतिहास प्रकाश बुक डिपो, बड़ा बाजार, बरेली
11. पीट मोंद्रियान, विकिपीडिया, en.m.wikipedia.org
12. Aalekhan, अमूर्त चित्रण, Singhh3.blogshat.com